# आषाढ़ का एक दिन में आधुनिकता और मोहन राकेश

17

**सुमित्रा पाठक**
*शोधार्थिनी (हिन्दी विभाग)*
*गोकुलदास हिन्दू गर्ल्स कॉलेज मुरादाबाद (उ.प्र.)*

**प्रो. (डॉ.) सीमा अग्रवाल**
*विभागाध्यक्षा (हिन्दी विभाग)*
*गोकुलदास हिन्दू गर्ल्स कॉलेज मुरादाबाद (उ.प्र.)*

***सारांश***

*हिंदी साहित्य संसार प्रारंभिक काल से ही विविध विधाओं की जननी व शरणस्थली सम रहा है। आधुनिकता की दौड़ में सम्मिलित रचनाकार अपने भावों, विचारों व अनुभूतियों को उनके संपूर्ण यथार्थ रूप में प्रस्तुत करना चाहते हैं ताकि समाज के चेहरे पर पड़े दिखावटी आवरण के नीचे की सच्चाई को जाना जा सके।*

*ऐसे ही क्रांतिकारी लेखकों की पंक्ति में शीर्षस्थ स्थान पर आसीन मोहन राकेश जी नाट्य़ जगत के एक विशिष्ट लेखक ही नहीं थे अपितु उसके मसीहा भी थे। वे एक ऐसे कृतिकार थे जिन्होंने सिनेमा जगत तथा दृश्य –श्रव्य रूपों को तो विविध प्रकार से समृद्ध बनाया ही ,साथ ही पृथक रंगमंचीय विशेषताओं के निरूपण से कला जगत पर अपनी अमिट छाप छोड़ी।*

*कृतिकार की चमत्कारिक नाट्य रचनाओं में फैला आधुनिकता बोध ही युगबोध बनकर उभरा है जिसने पाठकों व दर्शकों को अंतस की अतल गहराइयों तक आंदोलित किया है।*

***मुख्य शब्द***

*यथार्थ, शीर्षस्थ, समृद्ध, युगबोध।*

कथावस्तुजगत : आधुनिक आयाम–नाटककार मोहन राकेश जी की स्वनामधन्य लेखनी का सुपरिणाम उनकी कालजयी कृति 'आषाढ़ का एक दिन'नाटक है जो स्वयं में आधुनिकताबोध के विविध स्तरों को व्यंजित करता है। उनकी आधुनिक दृष्टि समस्त नाटकीय तत्वों को पूर्णतया ग्रहण करने के बाद भी समकालीन व्यक्ति की ऊब, घुटन, कुंठा व संत्रास का दर्शन करने से मुख नहीं मोड़ती। नाटक का नायक पौराणिक नामधारी कालिदास वृहद अर्थों में आज के मानव द्वारा सहन किए जाते दुःखों व परेशानियों को ही आवाज देता लगता है।

नाटक की नायिका मल्लिका है, जिसके साथ आषाढ़ की प्रथम धारासार वर्षा में भींगकर उसे पुलक का अनुभव होता है, उसके हृदय का एक–एक कण रोमांचित होकर प्रत्येक क्षण को अमर बनाना चाहता है। नाटक के आरंभ में चित्रित घायल हरिणशावक को हाथों का सहारा दिए कालिदास के साथ मल्लिका का होना उनके प्रेम को अमर बनाता जान पड़ता है। यह एक ऐसा लगाव है जिसमें डूबकर मल्लिका अपनी अनुभवी मां की सलाह को एक किनारे रख आत्ममोद में ही मग्न है,"मैं वास्तव में अपनी भावना से प्रेम करती हूं जो पवित्र है, कोमल है, अनश्वर है।",[1]

मल्लिका का स्वार्थ रहित प्रेम व नेक सलाह उसके बाल सखा कालिदास को उज्जियनी गमन हेतु विवश करती है जबकि वह स्वयं अनिच्छुक हैं। इसका कारण है कि वह वहां के चोचलों से भली भांति परिचित होते हुए इस कटु सत्य से भी भिज्ञ हैं कि राजशाही की शरण कवि प्रतिभा को समूल उखाड़ कर उसे एक निष्प्राण जीव बना देगी।

कालिदास के लाख मना करने के बाद भी मल्लिका अपने सखा को राज्य में जाने हेतु मना लेती है जबकि उसका कथन स्वाभाविक रूप से दर्द को छुपाता प्रतीत होता है"तुम्हारे चले जाने से मेरे अंतर को एक रिक्तता छा लेगी। बाहर भी संभवतः बहुत सूना प्रतीत होगा, फिर भी मैं अपने साथ छल नहीं कर रही। मैं हृदय से कहती हूं तुम्हें जाना चाहिए।"[2]

इस संदर्भ में मल्लिका आधुनिक नारी का बखूबी प्रतिनिधित्व करती है ,जो पति को शीर्ष पर आरूढ़ करने हेतु समस्त त्याग करने को तत्पर है। कालिदास ग्राम प्रांतर की सोंधी उर्वर भूमि से विदा तो अवश्य होता है, राज्याश्रय में जाकर राज दुहिता से परिणय भी करता है, सत्ता, सम्मान व ऐश्वर्य भी प्राप्त करता है तथापि अंतर्मन की अतल खोह में मल्लिका को बैठाये रहता है उसे वह एक क्षण को भी विस्मृत नहीं कर पाता। आखिर वह कौन सा बंधन था जो उसे मल्लिका से निबद्ध किये था? शायद तथ्य यह था कि उसकी भोली भाली ग्राम सखी उसके प्राणों का स्पंदन व सांसों का अटूट बंधन थी, ऐसे में उससे पृथक होना कठिन व असंभव दोनों थे।

राज्य की श्री ग्रहण कर उन्हें अतिरिक्त अहसान स्वरूप कश्मीर का शासक भी नियुक्त किया जाता है तथापि वे उत्तरदायित्व निर्वहन में पूर्णतया असफल होकर, घुटनयुक्त वातावरण को त्याग कर पुनः मल्लिका के पास आ जाते हैं, शायद सुख शांति की खोज में। यहां पर उन्हें पर्याप्त आदर, सत्कार मिलता है लेकिन मल्लिका की बच्ची का रोदन स्वर उन्हें झकझोर डालता है, जिस पर मल्लिका का कथन धार को और तेज कर देता है"यह मेरा वर्तमान है"।[3]

https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.2026.v17SI01.17

निराश कालिदास मल्लिका के घर को तुरंत त्याग कर आषाढ़ की उसी घनघोर वर्षा में विदा हो जाते हैं, उनकी आंखों ने पर्याप्त देख लिया था ,अब आगे कुछ और देखने की इच्छा नहीं थी। कालिदास की डांवाडोल मनः स्थिति आधुनिक मानव के चंचल चित्त को व्यक्त करती है।

मल्लिका के हृदय में कालिदास के साथ भींगने की भरसक इच्छा होने के बाद भी उसकी बच्ची की रोदन ध्वनि पैरों में बेड़ियां डाल देती है जो वस्तुतः उसकी कर्तव्य भावना का निदर्शन है। कालिदास की प्रतिभा का नष्ट होना वृहद रूप में आधुनिक मानव द्वारा सत्ता के हाथों अपनी प्रतिभा को गिरवी डालना है। जीवन की भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु ऐसा कृत्य आवश्यक है अन्यथा की स्थिति में परिणामभोक्ता दुःखद स्थिति में पहुंच सकता है। नाटककार इस स्थिति को हवा देते हुए अपने द्वितीय इतिहास आधारित नाटक' लहरों के राजहंस' की भूमिका में सटीक टिप्पणी करते हैं," व्यक्ति कालिदास को उस अंतर्द्वन्द से गुजरना पड़ा या नहीं यह बात गौण है। मुख्य बात यह है कि प्रत्येक काल में बहुतों को उसमें से गुजरना पड़ा है, हम भी आज उसमें से गुजर रहे हैं, हो सकता है कि व्यक्ति कालिदास का यह नाम भी वास्तविक न हो पर हमारी आजकल की सृजनात्मक प्रतिभा के लिए इससे अच्छा दूसरा नाम दूसरा संकेत मुझे नहीं मिला है।"[4]

कालिदास की आधारभूत समस्या परिवेश से उखड़ने की है, जो वस्तुतः आधुनिक मानव की नियति है। नाटक के अंत में वे देश–विदेश घूम कर भौतिकता भोगकर, थके, हारे, टूटे, विघटित व जर्जर रूपाकृति में वापस आते हैं। ठीक यही हालत आधुनिक मानव की है, जो जीवन को स्वर्ग बनाने की महती लालसा लिए पत्नी, बच्चों को किनारे रख धनोपार्जन की लिप्सा में लगा रहता है। सर्वत्र निराश होकर जब अंत में वह घर वापस आता है तो पारिवारिक सदस्यों के पास उन्हें अपनाने का पूर्ण विकल्प नहीं रह पाता यथा–नाटक में कालिदास की घर वापसी पर मल्लिका का अनैच्छिक परिणय विलोम से हो चुका था और वह चाहकर भी अपने बाल सखा को पुनः अपना नहीं सकती थी क्योंकि कुछ वैवाहिक मजबूरियां एक शादीशुदा स्त्री के समक्ष होती ही हैं। समय की अतिशय शक्ति के समक्ष सब बौने पड़ जाते हैं, उसे किसी के कार्य से किंचित भी सरोकार नहीं, वह अपनी अबाध गति से चलायमान रहता है। नाटक की समाप्ति पर कालिदास द्वारा बोला गया वक्तव्य समय की निरपेक्षता का नमूना है,"सच कहूं तो वह व्यक्ति हूं, जिसे मैं स्वयं नहीं पहचानता"।[5]

इस संदर्भ में रमेश चंद्र मिश्र जी का वक्तव्य एकदम तर्कसंगत है,"पुरुष पात्रों में जो अस्तित्व है, वह नारी के सहचर, सहयोग और साथ रहने की विवशता का है और जो अनस्तित्व के पीछे छटपटाहट है, वह स्वावलंबन, व्यक्तित्व मान्यताओं को बनाए रखने की लालसा के कारण प्रतीत होती है। वही स्त्री पात्रो में स्थिरता, आत्मावलंबन तथा स्वाभिमान के भाव स्पष्ट दृष्टिगोचर होते हैं"।[6]

नामकरण और आधुनिकता–विवेच्य नाटक व्यंजनापूर्ण व सार्थक नाम से अभिहित है, जो घटनाओं की क्रिया, प्रतिक्रिया को प्रकाशित करता लगता है। यहां उनकी विश्वविश्रुत कृति' मेघदूत' में 'आषाढस्य प्रथमा दिवसे' वाली पंक्ति प्राप्त होती है। नायक की हृदयस्थ भावना से संबद्ध नाटक का नामकरण नाटककार ने जानबूझकर किया होगा। डॉ सुरेश अवस्थी जी का कथन उक्त तथ्य को मजबूती प्रदान करता है"सभी देशों के नाटक साहित्य के इतिहास में विभिन्न युगों में जब भी श्रेष्ठ ऐतिहासिक नाटकों की रचना हुई है, तब नाटककारों ने प्राचीन कथानकों को नई दृष्टि से देखा है और उनकी नई अर्थ व्यंजनाएं दी हैं।"[7]

नाटककार ने इतिहास कथा का चुनाव मात्र ऐतिहासिक सत्यों के प्रस्फुटन हेतु न कर नाटकीय स्थितियों को प्रभावी बनाने के उद्देश्य से किया है। राकेश जी परंपराओं की बंद पड़ी परिपाटी में बंधकर काम करने वालों में नहीं थे अपितु वे प्रत्येक क्षण आधुनिकता के साए में गुजारने के इच्छुक थे। यह वह निर्णायक बिंदु है, जो बताता है कि लेखक समय की धारा के साथ है या धारा उसे बहाकर पीछे खदेड़ रही है।

नाट्यारम्भ आषाढ़ की मेघ गर्जना व घनघोर बारिश की झड़ी से होता है तो अंत भी ऐसे ही वातावरण से होता है। नाटकीय कलेवर में आषाढ़ की बारिश केंद्र में है यथा–मातुल के फिसल कर गिरने से पैर में लगी चोट, विलोम का बारिश में भींगते हुए दरवाजे तक आकर इसे खटखटाना, मल्लिका द्वारा कपड़ों में नमी की शिकायत करना या कालिदास का नाटक की समाप्ति पर मल्लिका के घर में गीले रूप में प्रवेश करना।

नाटकीय धरातल के आरंभ में चित्रित आषाढ़ की बूंदे मल्लिका की सौभाग्य सूचक हैं जबकि अंत में यही बारिश उसके दुर्भाग्य की काली छाया सम गिरती है। कालिदास की वियोगाग्नि में मल्लिका जीवन भर दग्ध रहती है, जो वास्तव में उसकी नियति है, मजबूरी है और उसके जीवन का दुखद अंत है। इस प्रकार नाटक का नामकरण अत्यंत फलदायी व कलात्मक बन पड़ा है जो नाटककार की असीम प्रतिभा वैविध्य का निदर्शन है।

चरित्रों का वैशिष्ट्य–नाटक में प्रतिबिंबित शिल्पगत वैचित्र्य नाटककार की कुशलता व सफलता के झंडे गाड़ता लगता है। वस्तुतः इसी बुनियाद पर आधृत होकर संपूर्ण रचना फलती फूलती है। नाटक के शिल्प पक्ष में भी आधुनिकता दृष्टिगत होती है और उसमें जीवन का स्पंदन स्वच्छ रूप से हिलोरें भर रहा है। डॉ. गोविंद चातक का वक्तव्य प्रेक्षणीय है 'आषाढ़ का एक दिन' एक सफल कृति है। इसे कल्पना का यथार्थ कहें या यथार्थ की कल्पना, भावबोध का रोमानी धरातल कहें या यथार्थ का कटु अहसास, नियति का अंकन कहें या आकांक्षा का भटकाव यह एक बद्ध दृष्टि से बंधने वाला नाटक नहीं है। हर अन्वेशी दृष्टि के आगे यह अर्थ के नए स्तर खोलता है और बहुधा एक से अधिक संकेत देता है।"[8] पात्र हों या चरित्रों का चारित्रिक विस्तार दोनों ही शिल्प पक्ष में अपना विशेष स्थान रखते हैं। नाटक के केंद्रीय पात्र कालिदास व मल्लिका कथावस्तु में अपना विशेष स्थान रखते हुए आधुनिकता के जीवन्त प्रतिरूप

लगते हैं। कालिदास यद्यपि पौराणिकता से उठाया गया लगता है तथापि वह प्रत्येक दृष्टि से समसामयिक है। नाटकीय द्वंद यद्यपि कवि व राज्याश्रय के मध्य छिडा है तथापि यह स्पष्ट संकेत देता है कि एक लेखक को मजबूरीवश ही राज्याश्रय में जाना पड़ता है। सत्ता का साथ लेखक की लेखकीय क्षमता को निर्मम रूप से कुचलकर उसे बिना पेंदी का लोटा बना डालता है, जो न घर में रूक सकता है, न बाहर। विघटित व्यक्तित्व वाला कालिदास नाटक की समाप्ति पर किसी योग्य नहीं बचता। रमेश गौतम जी का विचार स्पष्ट है, "सृजनशील साहित्यकार का व्यक्तित्व खंडित हो गया। यह खंडित हो गया। यह खंडित होता हुआ व्यक्तित्व कालिदास के रूप में किसी भी काल के सृजनशील साहित्यकार का प्रमाणित होता है।"[9]

ठीक इसी तरह मल्लिका अपने बाल सखा कालिदास को जीवन के शीर्ष पर आरूढ़ करने हेतु अपना सर्वस्व बलिदान कर देती है तथापि समाज उसे कुत्सित दृष्टि से ही देखने का अभ्यस्त है। विलोम की कटूक्तियों द्वारा स्पष्ट हो जाता है कि कालिदास मल्लिका के संबंधों को लेकर ग्राम प्रांतर में कई अपवाद पाए जाते हैं। इससे स्पष्ट है कि नारी के प्रेम, त्याग, सेवा व समर्पण का कोई मूल्य नहीं अपितु समाज अपनी इच्छानुसार ही निर्णय लेगा।

मल्लिका इस संदर्भ में आधुनिक स्त्री का गौरव है कि वह किसी के समक्ष झुकना नहीं चाहती बल्कि प्रत्येक कार्य में' स्व' का सम्मान करती है। विधवा मां अंबिका वैधव्य के दुर्भाग्यपूर्ण थपेड़े खाकर अनुभवी अभिभावक की भांति बच्ची को जीवन शिक्षा देने की उत्सुक हैं, जिसे उसकी भावना आवेष्टित पुत्री सर्वथा अस्वीकार कर देती है। मां झल्लाकर कह उठती हैं" मां का जीवन भावना नहीं कर्म है।"

विलोम खलनायक की वेशभूषा में लिपटा होने पर भी बाह्य तौर पर इतना सौम्य व शांत है कि उसकी वाणी त्याग भाव से परिपूर्ण लगती है। यहां स्पष्टतया ही कालिदास विलोम से पिछड़ता सा लगता है। वह अपनी गर्जन पूर्ण व्यंग्योक्ति द्वारा स्वयं से संबंधित रहस्य भंडार खोल देता है,"कालिदास क्या है? एक सफल विलोम और विलोम एक असफल कालिदास ।"[11] वह कालिदास से अधिक चालाक व संयमपूर्ण मनोवृति युक्त है। समयानुकूल प्रतिक्रिया देने में उसका कोई प्रतिद्वंद्वी नहीं। उसके हृदय में मल्लिका अथवा किसी भी पात्र के प्रति कोई गलत भावना नहीं। मल्लिका द्वारा निहायत कटु भर्त्सना करने के बाद भी वह अपने अंतस की समस्त गड़ी दबी बातें बता कर ही संतुष्टि महसूस करता है। वह तभी जाता है जब मन की समस्त भड़ास बाहर निकाल देता है।

प्रियंगुमंजरी नामधारी राजदुहिता राजशाही के समस्त घमंडी चोचलों के साथ मल्लिका के घर पदार्पण करती है। वह उसके जर्जर मकान को धराशायी करवा कर नया भवन निर्मित करने की इच्छुक है। आधुनिक काल भी इस दृष्टि से विभिन्न नहीं जान पड़ता ,तात्पर्य यह कि सत्तापक्ष वाले व्यक्ति अपने मित्रों, संबंधियों व परिचितों का भला करना चाहते हैं ताकि अवसर प्राप्ति पर उन्हें या तो अपने अहसानों तले दबाया जा सके या दूसरों के समक्ष उनके पुराने गरीबी के दिन स्मृति पटल पर वापस लाकर उन्हें अपमानित किया जा सके।

नाटक में चित्रित समस्त पात्रों में इस कदर आधुनिकता व्याप्त है कि वे किसी भी स्थान पर यह आवरण उतारकर नहीं रखते। रोचक है लेकिन सत्य है कि समस्त पात्र अंतर्मुखी प्रवृत्ति युक्त हैं। बाह्य रूप से वे भले कुशल जान पडते हों लेकिन अपने सर्जक की भांति भीड़ के मध्य भी एकांत कारावास भोग रहे हैं। विलोम हो या कालिदास सबका व्यक्तित्व विभाजन लेखक की लेखनी का संस्पर्श पाकर जीवन्त हो उठा है।

जगदीश चंद्र माथुर ने नाटक में 'सहज स्वाभाविकता और नाटकीयता के यथार्थपरकता और काव्यात्मकता के जिस मिश्रण का सूत्रपात किया, इसकी महत्वपूर्ण परिणति' आषाढ़ का एक दिन में हुई'।

संवाद शिल्प व आधुनिकता बोध–ऐतिहासिक धरातल पर स्थापित नाटक में संवाद योजना आधुनिकता से ओतप्रोत है तथापि संस्कृत शब्दों के प्रभाव से मुक्त नहीं है। राकेश जी आजीवन नाटक में सही शब्द की खोज में न केवल रत रहे अपितु सफल भी हुए। संवादों की मर्मस्पर्शिता हृदय को झकझोरने में सक्षम है। परिस्थितियों की मांग के अनुसार संवाद कहीं छोटे, कहीं बड़े तो कतिपय स्थलों पर तीक्ष्ण या व्यंग्यपूर्ण भी हो गए हैं। मल्लिका का संवाद लंबा होते हुए भी रोचकता व प्रभावकारिता से अछूता नहीं है यथा,"मैं यद्यपि तुम्हारे जीवन में नहीं रही परंतु तुम मेरे जीवन में सदा बने रहे हो। मैंने कभी तुम्हें अपने से अलग नहीं होने दिया। तुम रचना करते रहे और मैं समझती रही कि मैं सार्थक हूँ मेरे जीवन की भी कुछ उपलब्धि है।"[13]

संवाद नाटकीय गतिशीलता में उत्तरोत्तर वृद्धि करते जाते हैं। समस्त पात्र अपनी अनुभूति एवं वेदना को प्रभावी रूप से समक्ष लाते हैं। मल्लिका का उद्‌गार दर्शनीय है," जो भाव तुम थे, वह दूसरा नहीं हो सका। परंतु अभाव के कोष्ठ में किसी दूसरे की जाने कितनी कितनी आकृतियां हैं।"[14]

मल्लिका व कालिदास के परस्पर प्रेमपूर्वक व्यक्त किए गए उद्‌गार यथार्थ का चरम हैं। वे दोनों सदा के लिए एक होना चाहते हैं लेकिन नियति को ऐसा मंजूर नहीं। फलतः नाटक की समाप्ति पर वे मिलकर भी बिछड़ जाते हैं, देखकर भी अनदेखे बने रहते हैं। इस स्थल पर नाटककार द्वारा सष्जन प्रतिभा का अतुलित वैभव समाविष्ट किया गया है। व्यंजना का इतना सटीक प्रयोग हिंदी साहित्य संसार में दुर्लभ है यथा–कालिदास की वापसी पर विलोम का मल्लिका से कथन,"तुमने अब तक कालिदास के आतिथ्य का उपक्रम नहीं किया? वर्षों के बाद एक अतिथि घर में आए और उसका आतिथ्य न हो, जानती हो कालिदास को इस प्रदेश के हरिण शावकों से कितना मोह है–एक हरिणशावक इस घर में भी है। तुमने मल्लिका की बच्ची को नहीं देखा? उसकी आंखें हरिण शावक से कम सुंदर नहीं है"14 विलोम के शांत दिखने वाले उपरोक्त शब्दों में कटार से ज्यादा पैनापन है ,जो किसी को भी चुपचाप टुकड़ों में बांट दे। राकेश जी द्वारा प्रयुक्त ऐसी नव संवाद योजना सराहनीय है।

https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.2026.v17SI01.17

**नर–नारी संबंध : आधुनिकता–**

प्रबुद्ध नाटककार के समस्त नाटकों की धुरी नर–नारी संबंधों का विषाक्तपन है, चाहे वह प्रथम नाटक'आषाढ़ का एक दिन' हो या अन्य। नायक कालिदास व नायिका मल्लिका की दारुण गाथा को स्वयं में समेटे नाटक स्वगति से अग्रसर होता है। मल्लिका नायिका होते हुए भी नायक पत्नी होने के सुख से वंचित है। यह सौभाग्य राजकन्या प्रियंगुमंजरी की हस्त रेखाओं में है। विडंबना फिर भी है कि उनसे विवाह पश्चात भी कालिदास कभी प्रसन्न नहीं रहे क्योंकि वह मल्लिका को गांव में छोड़कर राजशाही में रम नहीं पाए। राजदुहिता इस सत्य से भलीभांति परिचित होने के कारण ही मल्लिका के घर का परिसंस्कार करवाने हेतु प्रतिबद्ध होती हैं ताकि कालिदास सखी को नीचा घोषित कर स्वयं की श्रेष्ठता साबित की जा सके। वह मल्लिका को विवाह बंधन में फंसाने हेतु ही राज्य के दो कर्मचारियों अनुस्वार व अनुनासिक को अपने आगमन से पूर्व ही मल्लिका के घर भेजती हैं। दूसरी तरफ स्थित है मल्लिका का आदर्श प्रेम जो असीम दुख प्राप्ति पश्चात भी अपने बाल सखा को राजशाही में भेजना चाहती है और अपनी मां से कुछ ऐसा ही कहती है, "मैं रो नहीं रही हूं मां। मेरी आंखों से जो बरस रहा है वह दुःख नहीं है। यह सुख है मां सुख।"[16]

उसे अपने अंतर्मन में विश्वास था कि कालिदास उससे दूर होकर नहीं रह सकते। वे जल्द ही उसके पास वापस आएंगे और होता भी ऐसा ही है। नाटक की समाप्ति पर जीवन से थका हारा कालिदास परिस्थितियों को स्वीकार करने में सर्वथा असमर्थ होकर घर से बाहर चला जाता है अनदेखी ,अनचाही पगडंडियों की तलाश में। मल्लिका द्वारा पीछे से आवाज देने पर वहां शून्य के अतिरिक्त कुछ नहीं मिलता।

**आधुनिकता और नियतिवाद–**वृहद स्तर पर चर्चा की जाय तो नाटक के मुख्य पात्र कालिदास की नियति आधुनिक मानव के संत्रासयुक्त, कष्ट परिपूर्ण, अवसरों की तलाश में रत व जीविकोपार्जन की लंबी दौड़ में सम्मिलित मानव से बखूबी की जा सकती है। कालिदास भाग्य की सकारात्मक व कुछ मायनों में संशयात्मक दृष्टिकोण के पक्षपाती जान पड़ते हैं जबकि विलोम भाग्य की नकारात्मकता को इंगित करता एक ऐसा दर्पण है जो असफलता को ही अपनी नियति मानता है, कम से कम नाटक के प्रारंभ में तो ऐसा ही लगता है।

नाटक की समाप्ति पर तो वह अपने को भाग्य विधाता समझ कालिदास को ही व्यंग्यात्मक शब्दों में फंसाता लगता है। उसका कथन कि अवसर किसी की प्रतीक्षा नहीं करता या समय धूप और नैवेद्य लिए द्वार की दहलीज पर नहीं खड़ा रहा, वस्तुतः कालिदास के प्रति उसके अंतर्मन की समस्त कटुता को ज्ञापित करता है।

सच्चे अर्थों में परीक्षण किया जाए तो नाटककार राकेश जी ही स्वसृजन कालिदास के माध्यम से आवाज देते जान पडते हैं। कालिदास का राज्याश्रय की ऊंची ऊंची दीवारों व महलों में दम घुटता है ठीक उसी भांति नाटककार भी विद्यालय की दुर्भाग्यपूर्ण नीरस ,जिंदगी को एक ही ढर्रे पर नहीं जी पाते। उन्हें बेचैनी एवं मनहूसियत लगती थी कि किस प्रकार विद्यालय की घंटी के बजने की प्रतीक्षा में हम सजीव लोग एक–एक कर दिन काट रहे हैं।

कालिदास को पूर्णतया आत्म सीमित व स्वार्थी व्यक्ति की संज्ञा दी जाती है, न केवल ग्रामवासियों द्वारा बल्कि मल्लिका की मां अंबिका द्वारा भी,"मैं ऐसे व्यक्ति को अच्छी तरह समझती हूं। तुम्हारे साथ उसका इतना ही संबंध है कि तुम एक उपादान हो जिसके आश्रय से वह अपने आप से प्रेम कर सकता है।"[17]

नाटककार राकेश जी को भी व्यक्ति घमंडी, औरतों का पिछलग्गू रास–रंग की जिंदगी जीने वाले व्यक्ति के रूप में समझ बैठे थे अथवा पूर्वाग्रह ग्रस्त होकर या उनकी नाट्य रचनाओं की बढ़ती लोकप्रियता को देखकर लोगों ने उनके बारे में गलत अनुमान लगाये। अंबिका का तो यह भी मानना था कि पूर्व की निर्धनतावश कालिदास ने मल्लिका से विवाह नहीं किया तो कोई बात नहीं लेकिन राजशाही में जाकर अब उनके दिन अच्छे हो जाएंगे तो अब भी वे मल्लिका को क्यों नहीं अपनाना चाहते? उसकी सीमित बुद्धि यह कभी नहीं सोच सकती कि कालिदास राज्याश्रय में जाने हेतु इच्छुक नहीं है अपितु उनका अस्वीकार भी अंबिका को एक नाटक जान पड़ता है। अंबिका उन तथाकथित परिपक्व नारियों का प्रतिनिधित्व करती है जो अपना घर चलाने हेतु संसार के प्रत्येक व्यक्ति को स्वार्थी, निकम्मा व घटिया ही समझते हैं।

मल्लिका यहां पर आधुनिक सुशिक्षित नारियों का प्रतिनिधित्व करती हुई तथ्य के पक्ष और विपक्ष दोनों रूपों का विश्लेषण करके ही निर्णय पर पहुंचती है। अंबिका की बात को पूर्णतया अस्वीकार कर वह कालिदास को प्रत्येक प्रकार से राजशाही में जाने हेतु सहमत करती है। उसका एकमात्र कथन है कि यदि कालिदास ग्राम प्रांतर की उपजाऊ भूमि में विश्व प्रसिद्ध रचनाएं लिख सकते हैं तो राज्याश्रय में जाकर भी ऐसा कर सकते है," कोई भूमि ऐसी नहीं जिसके अंतर में कोमलता न हो"।[18]

राजशाही के चोचलों की चर्चा हो तो दंतुल व प्रियंगुमंजरी का नाम आना आवश्यक है। नाटककार यह स्पष्ट करना चाहते हैं कि किस प्रकार आधुनिक काल में भी लोग पद, पैसा व प्रतिष्ठा प्राप्त कर अनियंत्रित हो जाते हैं तथा दूसरों से मनमाना तो क्या सर्वथा असंभव व्यवहार करते हैं यथा–दंतुल का कालिदास के साथ हीन आचरण। ठीक इसी प्रकार प्रियंगुमंजरी भी इन दिखावों से दूर नहीं और ग्राम प्रदेश की प्रकृति को भी साथ में ले जाना चाहती है मानो प्रकृति भी उसके इशारों पर प्रफुल्लित या विषाद ग्रस्त हो जाएगी। यहां यह सत्य जानना आवश्यक है कि राजशाही में फंसे लोग जीवन यथार्थ से पूर्णतया पृथक हैं उनमें उनका कोई दोष नहीं। वे जिस वातावरण में पैदा हुए हैं पले, बढ़े हैं, वहां यही बोया गया है। अगर ऐसा न होता तो दंतुल अपनी गलती का अहसास

मात्र होने से कालिदास से माफी मांगने नहीं दौड़ पड़ता या प्रियंगुमंजरी भी मल्लिका से अपनी माता को साथ ले चलने की बात नहीं कहती।

कतिपय राज कर्मचारी ऐसे भी हैं ,जो न तो वहां पैदा हुए हैं, न ही जीवन सत्य से दूर हैं बल्कि स्वयं को उच्च मानने में लगे हैं। ऐसा कटु सत्य हमें क्रोधित करता है। अनुस्वार व अनुनासिक राज्य के ऐसे ही दो चाटुकार हैं जो कहता बहुत है ,करता कुछ नहीं के सिद्धांत में विश्वास रखते हुए कार्य न कर उसको करने का प्रदर्शन मात्र करते हैं। रंगिणी व संगिनी नामधारी दो शोध छात्राओं द्वारा वर्तमान युग के ऐसे शोधार्थियों पर कटाक्ष किया गया है, जो वस्तु के बाह्य आवरण को देखकर उसके संपूर्ण रूप का अनुमान लगा लेते हैं या इतना भी आवश्यक न जान केवल ऊपरी तौर पर ही शोध पूर्ण कर लेते हैं लेकिन उनकी जानकारी सर्वथा शून्य होती है।
कालिदास भी आधुनिक मानव की भांति अपनी समस्त कमजोरियों को स्वीकार करते हुए कहते हैं कि उन्होंने जब–जब अपने गांव, खेत, खलिहान को स्मृति में भरकर लेखन किया रचना में सजीवता आ गई लेकिन जिस क्षण उनसे पृथक हुए सर्जना की जीवंतता खो गई।

अन्य स्थानों पर देखा जाए तो कालिदास सबल दिखाई देते हैं क्योंकि राजकर्मचारी दंतुल का राजशाही से संबंध जानने के बाद भी वे हिरण शावक उसे न देकर उससे उत्तर प्रत्युत्तर करते रहते हैं तथा दंतुल के शस्त्रों से थोड़ा भी भयभीत नहीं होते। भाग्यवादिता की बात आने पर वह अवश्य कुछ कमजोर जान पड़ते हैं," देख रहा हूं कि समय अधिक शक्तिशाली है क्योंकि वह प्रतीक्षा नहीं करता।"[19]

मातुल सत्ता सहायक ऐसे ही चाटुकारों की श्रेणी में आता है जो राजा खुश तो हम खुश वाले सिद्धांत में विश्वास रखते हुए अपना जीवन यापन करता है।

निष्कर्षस्वरूप नाटक में चित्रित समस्त पात्रों द्वारा आधुनिक वातावरण में व्याप्त हर खट्टी– मीठी सच्चाई का निदर्शन प्रस्तुत किया गया है जो कल भी सच था, आज भी है और हमेशा रहेगा। यह एक स्थापित तथ्य है कि स्वतंत्रता प्राप्ति पश्चात लिखे नाटकों में युगबोध ही मुख्य रहा है और यह भी एक सार्वभौमिक सत्य है कि परिस्थितियां परिवर्तित होने से युग सत्य में बदलाव आना आवश्यक है। एक कुशल लेखक की लेखनी द्वारा यह समस्त रूपांकन आवश्यक है चाहे वह ऐतिहासिक क्षेत्र हो, भौगोलिक, नैतिक अथवा वैज्ञानिक। प्राचीन काल में संबंध स्थाई रहते थे क्योंकि प्रेम शारीरिक कम, आध्यात्मिक अधिक था। आधुनिकता की भौतिक दौड़ में मानव शरीर बनकर रह गया है जिसमें पति–पत्नी और वो का चक्कर एक खास अड़ंगा लगा रहा है। व्यक्ति चाहते हुए भी इस जंजाल से मुक्त नहीं हो पाता। यही विवेचना नाटक में बड़ी श्रेष्ठता से चित्रित की गयी है।

आधुनिक समय का एक भयावह सच यह भी है कि व्यक्ति चाहे तो राजसत्ता स्वीकार करे और न चाहे तो न करे क्योंकि पैसा कभी भी बर्बादी नहीं सहन करता अपितु दूसरों को फंसा लेता है। निक्षेप द्वारा यही कहा गया है,"अवसर किसी की प्रतीक्षा नहीं करता। कालिदास यहां से नहीं जाते हैं तो राज्य को कोई हानि नहीं होगी। राजकवि का आसन रिक्त नहीं रहेगा। परंतु कालिदास जो आज हैं, जीवन भर वही रहेंगे–एक स्थानीय कवि" ।[20]

मल्लिका द्वारा यह तथ्य उजागर किया गया है कि आधुनिक नारी विवाह संबंधों अथवा अपने जीवन के अधिकार को किसी के साथ न बांटकर संपूर्ण रूप से इसे अपनाना चाहती है। उसका कथन इसी भावना को परिपुष्ट करता है, "मल्लिका का जीवन उसकी अपनी संपत्ति है। वह उसे नष्ट करना चाहती है, तो किसी को उस पर आलोचना करने का क्या अधिकार है?"[21]

विवेच्य नाटक का सम्यक परीक्षण करने के उपरांत यह स्थापित किया जा सकता है कि आरंभिक काल से उठा प्राचीनता व नवीनता का द्वंद प्रत्येक युग में चलता रहा है और जन जीवन को एक बड़े स्तर पर इतना प्रभावित करता रहा है कि व्यक्ति सही दिशा ही भूल गया है। प्राचीन परंपराओं के पोषक स्वयं की आवाज को बुलंद रखना चाहते हैं जबकि आधुनिक पीढ़ी की दृष्टि में नवयुग ही सर्वश्रेष्ठ है। उनका विचार है कि नूतन चेतना ,नव ऊर्जा व नई संभावनाओं का संप्रेषण ही राष्ट्र को विश्व का सिरमौर बनाने में सक्षम है। आवश्यकता है युग की मांग को पहचान कर जीवन को सड़ी–गली परंपराओं से मुक्त करने की और आधुनिक काल के 'आषाढ़ का एक दिन' की बारिश में आनंद उठाने की।

**संदर्भ**

1. राकेश, मोहन–आषाढ़ का एक दिन (राजपाल एंड सन्ज–2021), पृ0सं0–15
2. वही, पृ0सं0–45
3. वही, पृ0सं0–104
4. राकेश मोहन, लहरों के राजहंस (राजकमल प्रकाशन पंचम संस्करण, 1978) पृ0सं0–20–21)
5. राकेश, मोहन : आषाढ़ का एक दिन, पृ0सं0–95
6. जाधव, डॉ. रमेश कुमार, मोहन राकेश : व्यक्तित्व एवं कृतित्व (गीता प्रकाशन प्रथम संस्करण, 1989), पृ0सं0–90
7. अवस्थी, डॉक्टर सुरेश–मोहन राकेश, लहरों के राजहंस–भूमिका (राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड नई दिल्ली) 1963, पृ0सं0–7

https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.2026.v17SI01.17

8. अवस्थी डॉक्टर सुरेश (हिंदी नाटक : सन 1960 वार्षिकी–1960) पृ0सं0–60
9. शर्मा, डॉक्टर शेखर–समकालीन संवेदना और हिंदी नाटक, पृ0सं0–163
10. राकेश, मोहन–आषाढ़ का एक दिन, पृ0सं0–16
11. वही, पृ0सं0–40
12. चुलकीमठ, डॉ. सुरेश चंद्र–मोहन राकेश का साहित्य (आर्य प्रकाशन प्रथम संस्करण, 1989), पृ0 सं0–126
13. राकेश, मोहन–आषाढ़ का एक दिन, पृ0सं0–92
14. वही, पृ0सं0–93
15. वही, पृ0सं0–106
16. वही, पृ0सं0–49
17. वही, पृ0सं0–26
18. वही, पृ0सं0–47
19. वही, पृ0सं0–109
20. वही पृ0सं0–34
21. वही, पृ0सं0–14